नबी (स.)

की

तत्वदर्शिता और सुशीलता

मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

"शुरू अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है।"

नबी *(सल्ल॰)* की तत्वदर्शिता और सुशीलता

मनुष्य को हमेशा सत्य की खोज रही है। मानव-इतिहास में ऐसा कोई युग नहीं कि संसार में सत्य के खोजियों का अभाव रहा हो। इस जगत् में हमें जो कुछ बाह्य रूप से दिखाई देता है उसी को मनुष्य ने सब कुछ समझ लिया हो, ऐसा कभी नहीं हुआ। अंधकारमय से अंधकारमय युग में भी मानव चिन्तन किसी न किसी अतींद्रिय एवं अभौतिक शक्ति या सत्ता में विश्वास रखता दिखाई देता है। मनुष्य ने सदैव उस सच्चाई को जानने और उस तक पहुँचने की कोशिश की है जो इस भौतिक जगत् के पीछे है। सत्य की खोज में मनुष्य ने चिंतन-मनन और प्रयासों से भी काम लिया है और इसके लिए उसने बड़ी-बड़ी तपस्याएँ भी की हैं। किन्तु सच्ची बात यह है कि मानव-लोक में आज सत्य और सच्चाई की कोई आवाज़ सुनाई देती है तो वह मनुष्य के अपने व्यक्तिगत सोच-विचार और तपश्चर्या का फल नहीं, बल्कि वह उन महान विभूतियों का उपकार है और उन्हीं की प्रतिध्वनि है, जिन्हें संसार नबी, पैग़म्बर या रसूल के नाम से याद करता आया है।

उन महापुरुषों ने जब इस बात की घोषणा की कि उन्हें सत्य का ज्ञान प्रदान किया गया है तो इस घोषणा से उनके जिस उच्च कोटि के विश्वास का पता चलता है वह हमें दूसरों के यहाँ नहीं मिलता। यह स्पष्ट गुण समस्त नबियों में समान रूप से पाया जाता है। नबियों ने जो कुछ कहा ज्ञान और विश्वास के आधार पर कहा। अनुमान और अटकल को उन्होंने अपना पथप्रदर्शक नहीं बनाया और न उन्हें इसकी कोई आवश्यकता ही थी कि वे अटकल और अनुमान का सहारा लेकर अपने विचारों को संयोजित करें। ईश-प्रकाशना स्वयं उनकी मार्गदर्शिका थी। सत्य स्वयं उनसे गुप्त-वार्ता करता था, सत्य स्वयं उन्हें सम्बोधित कर रहा था, फिर वे जीवन-निर्माण के लिए अनुमानित और काल्पनिक दर्शनों के मुहताज कैसे हो सकते थे! उन्होंने संसार को जो मार्ग दिखाया, वही जीवन का सच्चा और स्वाभाविक मार्ग है, जो ज्ञान देकर वे दुनिया में भेजे गए वही सत्य का ज्ञान है।

इस्लाम, जिसके विषय में तरह-तरह की बदगुमानियाँ और गलतफ़हमियाँ पाई जाती हैं, सत्य के जानने और नबियों के दिखाए हुए मार्ग की ओर मार्गदर्शन प्राप्त करने का एक मात्र वही प्रामाणिक माध्यम है। इस्लाम मार्गदर्शन का वह स्रोत है, जिससे मनुष्य अपनी पात्रता के अनुसार ज्ञान और विवेक का प्रकाश प्राप्त कर सकता है। ज्ञान और अन्तर्दृष्टि का जिज्ञासु इस्लाम से कभी भी बेनियाज (निस्पृह) नहीं हो सकता।

इस्लाम हमारे एहसास और सूक्ष्म कल्पनाओं का व्याख्याकार है। हमारी स्वाभाविक अपेक्षाओं का सबसे सही उत्तर इस्लाम है। इस्लाम ने विचार और कर्म की जो व्यवस्था प्रस्तुत की है, उससे उत्तम व्यवस्था सम्भव नहीं है। इस्लाम मनुष्य को हर प्रकार की वैचारिक और नैतिक गुमराहियों से मुक्त करके उसे सही विचार, सही दृष्टिकोण, पवित्रतम अभिरुचि और एहसास से परिचित कराता है। वह मनुष्य के विचार, शीलता और उसके कर्म करने की क्षमता को नष्ट नहीं करता, बल्कि चिन्तन के ऊर्ध्वगामी चरणों में वह मनुष्य का मार्गदर्शन करता है। इस्लाम मनुष्य को ऐसे स्थान पर देखना चाहता है जहाँ पूर्ण प्रकाश है, जहाँ अँधेरे का नामोनिशान भी नहीं पाया जाता।

इस्लाम मनुष्य को तत्वदर्शिता की शिक्षा देता है, जो इस आकाश के नीचे धरती पर सबसे मूल्यवान निधि है। यही वह धन है जिसे क़ुरआन ने 'ख़ैरे-कसीर' अर्थात् बड़ी दौलत कहा है। तत्वदर्शिता या हिकमत क्या है? इसकी व्याख्या विभिन्न ढंग से की गई है। हिकमत (Wisdom) की प्रत्येक व्याख्या अपने स्थान पर सही और दुरुस्त है। अरबी भाषा के प्रसिद्ध शब्दकोश लिसानुल-अरब में है—

> "हिकमत उत्तम चीज़ को उत्तम ज्ञान के द्वारा
> जानने को कहते हैं।"

पुरातन ग्रंथों में भी हिकमत पर बड़ा ज़ोर दिया गया है।

"हिकमत को न त्याग, वह तेरी रक्षा करेगी। उससे प्रेम रखना, वह तेरा पहरा देगी।"

(बाइबल, नीतिवचन 4/6)

"जो हिकमत प्राप्त करता है, वह अपने प्राणों से प्यार करता है।" (बाइबल, नीतिवचन 19/8)

"चाँदी नहीं, मेरी शिक्षा ही को लो और उत्तम कुन्दन से बढ़कर ज्ञान को ग्रहण करो। क्योंकि 'हिकमत' मूँगे से भी अच्छी है और सारी मनभावनी वस्तुओं में कोई भी उसके तुल्य नहीं है।" (बाइबल, नीतिवचन 8/10-11)

जिसे ज्ञान और हिकमत की दौलत मिली उसने जीवन के अभिप्राय को पा लिया, जो व्यक्ति ज्ञान और हिकमत से वंचित रहा वह वास्तविक जीवन से भी वंचित रहा। नबियों के आने के जहाँ और बहुत-से उद्देश्य रहे हैं, वहीं एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह भी रहा है कि वे अपने अनुयायियों को वह ज्ञान और हिकमत प्रदान करें जिससे ईश्वर ने उन्हें विभूषित किया है। जिसे हिकमत मिली उसने मानो ऐसी अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर ली जिसके प्रकाश में वह जीवन के विकासशील पहलुओं में मार्गदर्शन प्राप्त कर सकता है। हिकमत अर्थमयता और मूल्यों का अध्ययन और जीवन की व्याख्या है। हिकमत के बिना मनुष्य अपने आप से भी वास्तविक रूप से परिचित नहीं होता। हिकमत के बिना न तो चेतना यथार्थ तक पहुँच सकती है और न ही हम जीवन की सम्भावनाओं और उसकी गहराइयों से परिचित हो सकते हैं। हिकमत मनुष्य को केवल जीवन के

वास्तविक मूल्यों का ज्ञान ही नहीं प्रदान करती, बल्कि वह मनुष्य को सही अर्थ में सभ्यता और नैतिकता के उच्च स्थान से परिचित कराती है, जिसका परिणाम यह होता है कि मनुष्य केवल अपनी भावनाओं और जोश और आवेग का अनुसरण करने के बदले बुद्धि और विवेक से काम लेने लगता है। उसके एहसास में ज्ञान और अनुभूति का तत्व सम्मिलित हो जाता है। उसकी प्रत्येक मनोदशा अन्तर्दृष्टि में परिवर्तित हो जाती है। उसके जीवन और साधारण लोगों के जीवन में बड़ा अन्तर पैदा हो जाता है। वह ऐसे स्थान पर पहुँच जाता है, जहाँ मनुष्य के विभिन्न प्रकार के एहसास और भावनाओं में पारस्परिक टकराव और अप्रिय विषमता शेष नहीं रहती, बल्कि वहाँ मनुष्य के विभिन्न एहसास एक एहसास का रूप धारण कर लेते हैं, जीवन के पन्ने वहाँ बिखरे हुए दिखाई नहीं देते; बल्कि वे परस्पर मिले हुए एक जगह दिखाई देते हैं। यही वह स्थान है जहाँ मनुष्य को पूर्ण परितोष और वास्तविक शान्ति प्राप्त होती है।

जब मनुष्य जीवन के साधारण स्तर से मुक्ति पा लेता है और उसे जीवन के वास्तविक उद्देश्य और आशय की पहचान हो जाती है तो फिर वह दूसरों को अपने स्तर पर लाने के प्रयास में लग जाता है। ज्ञान और तत्वदर्शिता के बिना मनुष्य अन्धकार में रहता है। इस अन्धकार से छुटकारा सम्भव नहीं जब तक कि मनुष्य को स्वयं उससे छुटकारा पाने की चिन्ता न हो। बुद्धिमत्ता (Wisdom) और जागरूकता के अतिरिक्त नैतिकता की पवित्रता और

शिष्टता एवं सभ्यता की गणना भी हिकमत में होती है। अरब के लोग बुद्धि और विचार की प्रौढ़ता और सज्जनता की मिली-जुली शक्ति को हिकमत से अभिव्यंजित करते थे। और ऐसा व्यक्ति उनके यहाँ हकीम या हिकमतवाला समझा जाता था जो बुद्धिमान ही नहीं बल्कि सभ्य भी हो। वास्तव में हिकमत का हमारे जीवन से गहरा सम्बन्ध है। ज्ञान और हिकमत को यह अपेक्षित है कि ईश्वर के भय के साथ जीवन व्यतीत किया जाए। सही अर्थों में ईश्वर से डरनेवाले वही होते हैं जो ईश्वर की महानता को पहचानते हैं। क़ुरआन में है—

> "ईश्वर से डरते तो उसके वही बन्दे हैं जो ज्ञानवान हैं।" (क़ुरआन, 35:28)

पूर्वकालिक ग्रंथों में भी इस पहलू पर प्रकाश डाला गया है—

> "प्रभु का भय मानना 'हिकमत' का आरम्भ है।" (बाइबल, नीति॰ 9/10)
>
> "देख, प्रभु का भय मानना ही 'हिकमत' है और बुराई से दूर रहना ही समझ है।"
> (बाइबल, अय्यूब 28/28)
>
> "जब अभिमान होता है, तब अपमान भी होता है, परन्तु नम्र लोगों में 'हिकमत' होती है।"
> (बाइबल, नीति॰ 11/2)

ज्ञान और हिकमत की अपेक्षा ही नहीं बल्कि स्वयं हिकमत ही यह है कि हमारा जीवन अपने रब के प्रति कृतज्ञता प्रकाशन में व्यतीत हो। हज़रत लुक़मान के विषय

में क़ुरआन में आता है कि ईश्वर ने उन्हें हिकमत प्रदान की थी, वह हिकमत ही थी कि उन्हें इस बात की शिक्षा दी गई थी कि वे अल्लाह के कृतज्ञ बन्दे बनें—

> "निश्चय ही हमने लुक़मान को 'हिकमत' प्रदान की थी कि ईश्वर के प्रति कृतज्ञता दिखलाओ।" (क़ुरआन, 31:12)

ईश्वर के अन्तिम रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के चरित्र का जब हम अध्ययन करते हैं तो हमारा यह एहसास बढ़ जाता है कि नबियों को ईश्वर ने ज्ञान और हिकमत का बड़ा हिस्सा प्रदान किया है। मनुष्य में जितनी अधिक अन्तर्दृष्टि होगी, वह उतना ही अधिक आप *(सल्ल.)* के वचनों की मूलात्मा से परिचित हो सकता है, यहाँ तक कि आप *(सल्ल.)* के कथन और वचन ही उसके लिए आपके सच्चे रसूल होने के प्रमाण बन जाते हैं। आप *(सल्ल.)* का प्रत्येक कथन और आपके जीवन की प्रत्येक घटना चमत्कार सदृश है। अनुभव के लिए समझ और अन्तर्दृष्टि चाहिए। आपके वचनों से हमें उन सच्चाइयों का ज्ञान प्राप्त होता है जो अपरिवर्तनीय हैं। जब तक मनुष्य उन सच्चाइयों से परिचित न हो जाए, वह जीवन के वास्तविक आनन्द से अनभिज्ञ ही रहेगा। स्वतन्त्रता इसका नाम नहीं है कि मनुष्य अपने को वासनाओं और तुच्छ इच्छाओं के हवाले करके परिणाम की ओर से निश्चिन्त हो जाए। मनुष्य के लिए वास्तविक स्वतन्त्रता यह है कि वह हर प्रकार की पथभ्रष्टताओं से मुक्त होकर जीवन की प्राकृतिक और स्वाभाविक अपेक्षाओं को पूरी कर सके। वह गुनाहों से

भय से न बचे, बल्कि सच्चाई की प्रियता उसे गुनाहों से बचने पर बाध्य कर दे।

हम यहाँ नबी (सल्ल.) का एक कथन उद्धृत करते हैं, जो यह समझने के लिए पर्याप्त है कि ईश्वरीय सन्देष्टा (रसूल) ने जो मार्ग दिखाया है वही जीवन का सीधा और स्वाभाविक मार्ग है। ज्ञान और हिकमत की अपेक्षा यह है कि हम अपनी इच्छाओं को नबी *(सल्ल.)* के लाए हुए आदेश के अधीन कर दें। नबी *(सल्ल.)* कहते हैं—

> "मैं सुशीलता एवं नैतिकता को पूर्ण करने के लिए भेजा गया हूँ।"
>
> (हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक)

नैतिकता की परिपूर्णता को अपने भेजे जाने का उद्देश्य बताकर नबी *(सल्ल.)* ने इस बड़े तथ्य की ओर संकेत किया है कि मनुष्य का जीवन एक 'कुल' (इकाई) है। इस जीवन का अपना एक मौलिक भाव और अर्थ है। मनुष्य की सफलता इसपर निर्भर करती है कि उसके समस्त कर्मों और समस्त गतिविधियों से उसी मौलिक और वास्तविक भाव और अर्थ का प्रदर्शन हो। उसके सभी कर्म एक वास्तविक प्रेरक के अधीन होकर रहें। नैतिकता की कल्पना चेतना, संकल्प और अधिकार की स्वतन्त्रता के बिना सम्भव नहीं। सुशीलता और नैतिकता से अभिप्रेत संकल्प और अधिकार का सही उपयोग है। और यह उसी समय सम्भव है जबकि मनुष्य को अपनी वास्तविकता और अपने जीवन के मूल आशय और उद्देश्य का ज्ञान प्राप्त

हो। इसके लिए मनुष्य नबियों के मार्गदर्शन पर निर्भर करता है।

नबी*(सल्ल.)* ने मानव-जीवन को विभिन्न इकाइयों में विभक्त करने के बजाए उसे एक 'कुल' (इकाई) ठहराया है। रंग और सुगन्ध फूलों के लिए बोझ नहीं बनते। नैतिक आचरण भी मनुष्य के लिए बोझ नहीं, बल्कि उसके जीवन का वास्तविक सौन्दर्य है। जीवन में सुन्दरता और आकर्षण का आविर्भाव नैतिकता द्वारा ही होता है। फूलों से यदि रंग और सुगन्ध अभीष्ट है तो मानव-अस्तित्व से जिस बात की अपेक्षा की जाती है वह सुशीलता और नैतिकता के अतिरिक्त कुछ नहीं। यही कारण है कि हदीसों (नबी के कथनों) में सहानुभूति, करुणा और संवेदना इत्यादि सभी नैतिक गुणों को ही ईमान और इस्लाम ठहराया गया है। फिर नैतिकता का पूर्ण प्रदर्शन उस हक़ के अदा करने में होता है, जिसे हम ईश्वर का हक़ कहते हैं, जिसे अदा करना स्वयं ईश्वर ने अपने बन्दों पर ज़रूरी ठहराया है। मनुष्य विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों में जकड़ा हुआ है। इन सम्बन्धों के कारण स्वभावतः उसे विभिन्न प्रकार के हक़ अदा करने होते हैं। इन हक़ों का अदा करना मनुष्य का नैतिक कर्तव्य है। नैतिक दृष्टिकोण से मनुष्य पर सबसे पहला और बड़ा हक़ उसके ईश्वर का है। ईश्वर के हक़ अदा करने में उसकी पूजा और आज्ञापालन आदि सभी कुछ सम्मिलित हैं। ईश्वर के बाद ईश्वर के बन्दे होते हैं जिनका हक़ अदा करना मनुष्य के लिए ज़रूरी होता है। बन्दों में सबसे अधिक हक़ माता-पिता का होता है। इसलिए

कि उनके उपकार बहुत अधिक होते हैं। फिर क्रमशः दूसरे लोगों के हक़ और अधिकार होते हैं; इस क्रम में कुछ विवरण क़ुरआन की सूरा निसा की निम्नलिखित आयत में मिलता है–

> "अल्लाह की बन्दगी करो और उनके साथ किसी को साझी न बनाओ और अच्छा व्यवहार करो– माँ-बाप के साथ, नातेदारों, अनाथों और मुहताजों के साथ, नातेदार पड़ोसियों के साथ और अपरिचित पड़ोसियों के साथ और साथ रहनेवाले व्यक्ति के साथ और मुसाफ़िर के साथ और उनके साथ भी जो तुम्हारे कब्ज़े में हों। अल्लाह ऐसे व्यक्ति को पसन्द नहीं करता जो इतराता हो और डींगें मारता हो।" (क़ुरआन, 4:36)

इस आयत में ईश्वर की बन्दगी का तथा माता-पिता, नातेदार और दूसरे लोगों के साथ अच्छा व्यवहार करने का आदेश दिया गया है। इससे ज्ञात होता है कि जिस प्रकार माता-पिता और नातेदारों के साथ अच्छा व्यवहार करना मनुष्य के लिए एक नैतिक और स्वाभाविक बात है ठीक उसी प्रकार मनुष्य से ईश्वर की बन्दगी और उसके आदेशानुपालन की अपेक्षा भी एक स्वाभाविक अपेक्षा है। क़ानून की दृष्टि ही से नहीं बल्कि नैतिक दृष्टि से भी मनुष्य का कर्तव्य होता है कि वह ईश्वर की बन्दगी में लगा रहे। सच्चे और सही क़ानून मनुष्य के नैतिक आचरण के सुधार के लिए होते हैं। यदि मनुष्य अपने को ईश्वर की

बन्दगी से मुक्त रखता है और उसके आदेशों के विपरीत आचरण करता है तो वास्तव में वह अपना विरोधी और अपनी प्रकृति का शत्रु है। मनुष्य से ईश्वर ने इससे अधिक कोई और अपेक्षा नहीं की है कि वह अपनी प्रकृति को पददलित होने से बचाए और उसे विकसित करे। क़ुरआन में है—

> "सफल हो गया (वह) जिसने उसे (अपनी आत्मा और व्यक्तित्व को) विकसित किया और असफल हुआ (वह) जिसने उसे दबा दिया।" (क़ुरआन, 91:9-10)

अपनी और अपनी प्रकृति की सुरक्षा का एक ही रूप है, वह यह कि मनुष्य अपने जीवन को कुफ़्र और शिर्क (अधर्म और बहुदेववाद) से दूर रखे। यदि कोई कुफ़्र और शिर्क में पड़ता है, तो वास्तव में वह अपनी प्रकृति को कुचल रहा है और अपनी उस आत्मा को ख़ाक में मिला रहा है जो वास्तव में ईश्वर की अमानत है। नैतिकता की संग्राहक, व्यापक और विस्तृत धारणा को क़ुरआन में विभिन्न शैलियों में पेश किया गया है। नबी *(सल्ल.)* के विषय में कहा गया है—

> "निस्सन्देह आप नैतिकता के उच्चतम पद पर आसीन हैं।" (क़ुरआन, 68:4)

इस कथन का अर्थ है कि नबी *(सल्ल.)* नैतिकता की दृष्टि से अत्यन्त उच्च हैं। आप *(सल्ल.)* का प्रत्येक कर्म एक आदर्श है। आप *(सल्ल.)* यदि एक ओर अपने प्रभु के अत्यन्त कृतज्ञ और आज्ञाकारी हैं तो दूसरी ओर

जनसामान्य के लिए अत्यन्त सुशील और करुणावान भी हैं। नबी *(सल्ल.)* नैतिकता के जिस उच्चतम पद पर आसीन हैं, उसकी उच्चता और महानता का सही अन्दाज़ा उस समय होता है, जबकि वह आचरण भी हमारे समक्ष रहे, जिसका प्रदर्शन नबी *(सल्ल.)* के विरोधियों की ओर से हो रहा था। जीवन में नैतिक गुणों का पाया जाना आदमी के विवेकशील और सही मार्ग पर होने का प्रमाण है, और इसके विपरीत मनुष्य का नैतिक गुणों से विहीन होना उसकी पथभ्रष्टता का प्रत्यक्ष प्रमाण होता है। नबी *(सल्ल.)* के विरोधियों का निकृष्टतम आचरण इस बात का पता दे रहा था कि वे पथभ्रष्टता के अन्धकार में भटक रहे हैं यद्यपि वे नबी *(सल्ल.)* ही को उलटे दीवाना ठहरा रहे थे। कहा गया—

> "निस्सन्देह तुम्हारा रब उसे भली-भाँति जानता है जो उसके मार्ग से भटक गया है, और वही उन लोगों को भी जानता है जो सीधे मार्ग पर हैं।" (क़ुरआन, 68:7)

इसके बाद विरोधियों के निकृष्टतम चरित्र का चित्रण विशेष शैली में किया गया है—

> "अतः तुम झुठलानेवालों का कहना न मानना। वे चाहते हैं कि तुम ढीले पड़ो; इस कारण वे चिकनी-चुपड़ी बातें करते हैं। तुम किसी भी ऐसे व्यक्ति की बात न मानना जो बहुत क़समें खानेवाला और हीन है। कचोके लगाता और चुग़लियाँ खाता फिरता है। भलाई

से रोकता है, सीमा का उल्लंघन करनेवाला, हक़ मारनेवाला है, क्रूर है फिर अधम भी। इस कारण कि वह धन और बेटोंवाला है। जब उसे हमारी आयतें सुनाई जाती हैं तो वह कहता है : यह तो पहले लोगों की बेसनद बातें हैं।" (क़ुरआन, 68:8-15)

उच्चतम नैतिकता के मुकाबले में जिस नैतिकता का उल्लेख किया गया है उसमें जहाँ इसका उल्लेख हुआ है कि रसूल *(सल्ल.)* के विरोधी सज्जनता और मानवता की उपेक्षा कर रहे थे; वहीं उनके उस निकृष्टतम व्यवहार का भी उल्लेख किया गया है जो व्यवहार उनका ईश्वर और उसके रसूल *(सल्ल.)* के साथ था। एक ओर यदि वे दुःस्वभाव, अभद्र और नेकियों व भलाइयों के दुश्मन बनकर अहंकार में ग्रस्त थे, तो दूसरी ओर वे क़ुरआन की आयतों और रसूल की रिसालत और पैग़म्बर की पैग़म्बरी को झुठला भी रहे थे। यदि वे नैतिकता के उच्च स्थान को प्राप्त कर लेते तो उनका जीवन सफल और पूर्ण काम हो सकता था। वे ईश्वर के अधिकारों का भी आदर करते और जनसामान्य के साथ भी उनका सम्बन्ध अच्छा हो जाता।

ऊपर के विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि नैतिकता को यदि मानव-जीवन में मौलिक महत्व प्राप्त है तो इस्लाम ने भी उसके मौलिक महत्व को स्वीकार किया है, बल्कि उसे और अधिक व्यापकता और उच्चता प्रदान की। इसी प्रकार इस्लाम की समस्त शिक्षाओं और उसके आदेशों में बड़ी व्यापकता और उच्चता पाई जाती है। अब आप

नबी *(सल्ल.)* के इस वचन को कि 'मुझे नैतिक गुणों को पूर्ण करने के लिए भेजा गया है' फिर से पढ़िए और उसकी व्यापकता और अर्थवत्ता पर विचार कीजिए। यह एक तथ्य है कि आप *(सल्ल.)* ने मानवों को जिस ज्ञान और तत्वदर्शिता की शिक्षा दी हैं वह प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण है। उसमें कोई भी कमी नहीं पाई जाती। आपकी शिक्षाओं की यह वह स्पष्ट विशिष्टता है जिसके कारण हम आपको एक महान मार्गदर्शक ही नहीं, एक तत्वदर्शी और ज्ञानवान भी स्वीकार करते हैं, और वे सारे गुण रिसालत के ही अनिवार्य अंश हैं। वे लोग जो ज्ञान और अंतर्चक्षु के खोजी हों उनसे मैं निवेदन करूँगा कि वे ईश्वर के रसूल *(सल्ल.)* को मार्गदर्शक मानकर जीवन और उसकी समस्याओं पर विचार करें, चाहे उन समस्याओं का सम्बन्ध धारणा या दृष्टिकोण से हो या उनका सम्बन्ध मानव के व्यावहारिक जीवन से। व्यावहारिक जीवन में मनुष्य के व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों प्रकार के कार्य सम्मिलित हैं। दोनों प्रकार के कर्म और चरित्र सम्मिलित हैं। ईश्वर के रसूल *(सल्ल.)* के मार्गदर्शन में मनुष्य वह सब कुछ प्राप्त कर सकता है जिसकी वास्तव में उसे आवश्यकता है और जिसकी चाहत स्वभावतः मनुष्य में रखी गई है।

❖❖❖